Prof. Shashi Sharma, Principal
Professor, Department of Political Science
e-mail: prof.shashisharma@gmail.com

Political Sociology, PAPER VII

Course Content-12: 'Relationship between Politics and Society in India'

भारतीय राजनीति में धर्म एवं साम्प्रदायिकता:एक विश्लेषणपरक अध्ययन

(Religion and Communalism in Indian Politics: An Analytical Study)

धर्म एवं साम्प्रदायिकता को भारतीय राजनीति के महत्त्पूर्ण निर्धारक तत्त्वों की कोटि में शुमार किया जाता है। यहां की राजनीति में धर्म को समाज में शक्ति एवं प्रभाव अर्जित करने वाले माध्यम के रूप में चिन्हित किया गया है। आम चुनाव के समय जनता के बिखरे मतों को समेटने में एवं उसे वोटों में तबदील करने की राजनीति की दृष्टि से मतप्रबंधन के कारक के रूप में धर्म की भूमिका अति प्रासंगिक है।

धर्म सभी मनुष्यों के जीवन का मर्मतत्त्व है जो मानव जीवन के समग्र पहलुओं को प्रभावित करता है। **मजूमदार, डी.एन. तथा टी.एन. मदान** ने अपनी पुस्तक**'An Introduction to Social Anthropology'** में यह कहा है कि धर्म किसी पारलौकिक अतिमानुष और अतीन्द्रिय (Transcendental) शक्ति के भय का एक मानवीय प्रत्युत्तर है। यह व्यवहार की अभिव्यक्ति अथवा परिस्थितियों में किये गये अनुकूलन का वह रूप है जो अलौकिक शक्ति की धारणा से प्रभावित होता है। **किग्सले डेविस** का ये मानना है कि ''मानव समाज में धर्म इतना सर्वव्यापी स्थायी एवं दृढ़ है कि उसे स्पष्ट रूप से समझे बिना समाज को समझना मुश्किल है।'' धर्म और राजनीति परस्पर संबंधित होता है। यह लोगों के राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित करता है। धर्म और राजनीति के बीच चलने वाली अन्योन्य क्रियाओं से सदैव भारतीय समाज एवं राजनीति के गत्यात्मक स्वरूप को नया आयाम मिलता है।

भारतीय राजनीति औरधर्म (Religion and Indian Politics)

भारतीयराजनीति के परिप्रेक्ष्य में धर्म और राजनीति की अन्तःक्रियाओं को राजनीतिक दलों का निर्माण, चुनाव में प्रत्याशियों का चयन, मतप्रबन्धन की राजनीति आदि के प्रसंग में स्पष्टः देखा जा सकता है। मतदान व्यवहार का निर्माण एवं राजनीतिक व्यवहार को किसी विशेष दिशा में मोड़ने में धर्म की भूमिका काफी प्रमुख होती है। भारतीय राजनीति के प्रसंग में धर्म से प्रासंगिक विविध आयामों को निम्नांकित संदर्भों में देखा जा सकता है :

1. **धर्म एवं राजनीतिक दल**–भारत में धर्मनिरपेक्ष राजनीतिक संस्कृति की मौजूदगी के बावजूद स्वतंत्र भारत में धार्मिक आधार पर कई राजनीतिक दलों का गठन हुआ है, मसलन–शिरोमाणि अकाली दल, हिन्दू महासभा, बजरंग दल, विश्व हिन्दू परिषद्, रामराज्य परिषद्, शिव सेना, मुस्लिम लीग आदि। इन दलों के अस्तित्व–निर्माण में धार्मिक एवं सामुदायिक तत्त्वों की प्रधान भूमिका रही है। ये दल चुनाव में धार्मिक पक्षों को प्रधानता देते हैं और प्रत्याशियों के चयन से लेकर वोट मांगने और मतप्रबंधन करने तक में धर्म को बुनियादी तत्त्व के रूप में मान्यता देते हैं। इन दलों द्वारा अपने साम्प्रदायिक हितवर्द्धन के नाम पर चुनावी राजनीति का संचालन किया जाता है। चुनावी मुद्दों के रूप में जहां हिन्दू धार्मिक दलों द्वारा राम मंदिर का निर्माण, गौ हत्या बन्द करोएगंगा सफाई योजना जैसे धार्मिक प्रसंगों को प्रमुखता से उभारा जाता है, वहीं मुस्लिम लीग द्वारा चुनावी मुद्दों में अल्पसंख्यकों की सुरक्षा तथा सभी मामलों में उनकी उपेक्षा की बातें मुख्य रूप से उठायी जाती हैं।

धर्म आधारित लगभग सभी दलों की सक्रियता देश के किसी ख़ास हिस्से में केन्द्रित हैं, जैसे मुस्लिम लीग का कार्यक्षेत्र दक्षिण भारत के केरल प्रदेश में है जो मालाबार मापाला समुदाय के बल पर जीवित है। ऐसे ही सिक्खों के अकाली दल की सक्रियता पंजाब में और शिवसेना का कार्यक्षेत्र महाराष्ट्र में है। हिन्दू महासभा सैद्धान्तिक स्तर पर तो एक राष्ट्रीय पार्टी है, लेकिन व्यवहार में यह मुख्य रूप से मध्यप्रदेश तथा उसके आसपास के इलाकों में सक्रिय है। जनसंघ के साम्प्रदायिक आयाम पर टिप्पणी करते हुए **मॉरिस जोन्स** ने कहा है, ''जब तक कट्टरता की अभिवृत्ति से पूर्ण आर.एस.एस., जिसमें हिन्दू सांस्कृतिक जोश और सैन्यवादी ट्रेनिंग दोनों का संयोग है जनसंघ की आड़ में एकजुट होकर काम करता रहेगा, तब तक साम्प्रदायिकता इस राजनीतिक दल का महत्त्वपूर्ण पक्ष बना रहेगा।''

राजनीतिक दल एवं धर्म से प्रासंगिक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि यदि व्यापक परिप्रेक्ष्य में सामाजिक धार्मिक समुदायों के साथ दलों के संबंध को देखा जाय तो सभी पार्टियों में साम्प्रदायिकता के तत्त्वों की मौजूदगी कुछ न कुछ अंश में निश्चित रूप से होती है और देश की कोई भी पार्टी इससे अछूती नहीं है।

2. **धर्म और चुनावी राजनीति**–भारत में अधिकतर राजनीतिक दलों के नेताओं एवं पार्टी आलाकमान द्वारा सामुदायिक मुद्दों को आधार बनाकर जनमत को अपने पक्ष में करने का जीतोड़ प्रयास किया जाता है। मतदाताओं का वोट अपनी पार्टी के पक्ष में करने के लिए धार्मिक मठाधीशों यानी कि धर्माचार्यों, इमामों, पादरियों के साथ राजनीतिक तालमेल बैठाया जाता है और सांठ–गांठ करके उनके द्वारा संबद्ध समुदाय के मतदाताओं को किसी पार्टी के पक्ष में मतदान करने की अपील जारी करायी जाती है।दृष्टांतस्वरूप लोकसभा चुनावों में दिल्ली की जामा मस्जिद के शाही इमाम द्वारा मुस्लिम सम्प्रदाय के वोटरों के लिए जारी फ़तवा को इस प्रसंग का बेहतर उदाहरण माना जा सकता है। चुनावी सभाओं में एक राजनीतिक नेता के रूप में शाही इमाम का भाषण देना और मुसलमानों को किसी दल विशेष के प्रत्याशियों के पक्ष में मतदान करने के लिए अभिप्रेरित करना धर्म और राजनीति के गहरे संबंधों का द्योतक है। वहीं हिंदु कट्टरपंथी नेताओं द्वारा सर्वजनिक मंच से भड़काऊ भाषण देकर धर्म के नाम पर हिंदुओं को गोलबंद करने की अपील भी धर्म और राजनीति के रिश्ते की प्रगाढता को उजागर करती है। वस्तुस्थिति यह है कि चुनावी राजनीति के प्रसंग में धर्म के आधार पर वोटरों को रिझाने तथा धार्मिक हथकंडों का प्रयोग करके मतदाताओं को अपने पक्ष में करने की प्रवृत्ति कमोबेश सभी राजनीतिक पार्टियों में देखी जाती है।
3. **धार्मिक दबाव समूह और राजनीति**–धर्म के आधार पर संगठित साम्प्रदायिक संगठन व्यवस्थागत राजनीति में शक्तिशाली दबाव समूह की भूमिका निभाते हैं। इन दबाव समूहों द्वारा सरकारी नीतियों व निर्णयों को प्रभावित करने का कार्य किया जाता है। ये सरकारी नीतियों की आलोचना करते हैं तथा अपने संगठन के बैनर तले धरना प्रदर्शन, रैली व सभाओं का आयोजन करके सरकारी नीतियों व निणयों कें विरुद्ध जोरदार आवाज उठाते हैं और कभी–कभी सरकारी निर्णयों को अपनी ओर मोड़ने में सफल भी हो जाते हैं। उदाहरणार्थ, मुस्लिम संगठनों में जमीयत–उल–उलेमा–ए–हिन्द, इमारते शरिया, जमायते इस्लामी द्वारा एक शक्तिशाली दबाव समूह की भूमिका अदा करते हुए तीन विषयों के मामले में सरकारी नीतियों को प्रभावित किया गया है; ये विषय हैं–अलीगढ़ विश्वविद्यालय का अल्पसंख्यक स्वरूप स्थापित कराना, उर्दू को संवैधानिक संरक्षण दिलाना तथा मुस्लिम पर्सनल लॉ के संबंध में कोई तब्दीली न होने देना। वहीं विश्व हिन्दू परिषद् द्वारा दिये जाने वाले दबाव की वजह से अयोध्या मसलेपर केन्द्र सरकार द्वारा लिये जाने वाले कई महत्त्वपूर्ण निर्णयों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।
4. **मंत्रिमंडल निर्माण में धर्म की प्रधानता**–केन्द्र एवं राज्य दोनों स्तरों पर सरकार निर्माण के समय इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि मंत्रिमंडल में सभी धार्मिक सम्प्रदाय के सदस्यों को उचित प्रतिनिधित्व मिले। मंत्रिमंडल में सभी अल्पसंख्यकों–मुसलमानों, सिक्खों व ईसाइयों को समुचित प्रतिनिधित्व देना इस तथ्य का सूचक है कि देश में राजनीतिक सत्ता के अस्तित्व–निर्माण में धर्म की भूमिका काफी अहम् है।
5. **क्षेत्रीय राजनीति में धर्म की प्रधानता**–केन्द्रीय राजनीति के साथ क्षेत्रीय राजनीति में भी धर्म की भूमिका काफी प्रासंगिक होती है। इस प्रसंग का बेहतर उदाहरण केरल तथा पंजाब की राजनीति है। सतही स्तर पर केरल की राजनीति में वामपंथी रंग दिखायी देता है लेकिन इस राजनीति का आन्तरिक पक्ष धार्मिक–साम्प्रदायिक तत्त्वों के गठजोड़ से बना है। केरल की राजनीति में दो प्रकार के दबाव समूह सक्रिय हैं–साम्प्रदायिक तथा व्यावसायिक और वहां का साम्यवादी दल प्रगतिशील विचारों का समर्थक होने के बावजूद व्यवस्थागत धार्मिक दबाव समूहों के साथ तालमेल करके ही चुनावी राजनीति का संचालन करता है।

वहींधर्म और क्षेत्रीय राजनीति की अन्योन्यक्रिया को समझने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण उदाहरण पंजाब की राजनीति है जो सदैव अकाली दल की आन्तरिक राजनीति तथा शक्तिशाली शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्ध समिति के चुनावों के आसपास केन्द्रित दिखी है। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्ध समिति का चुनाव अकाली दल की राजनीति पर गंभीर प्रभाव डालता है और अकाली दल पंजाब की राजनीति पर। गुरूगोबिन्द सिंह द्वारा स्वर्ण मंदिर के सामने अकाल तख्त की स्थापना एक राजनीतिक शक्ति के

रूप में की गयी थी। इसलिए, पंजाब की राजनीति में अकाल तख्त एक समानान्तर सरकार की भूमिका अदा करता है, जिस पर पंजाब की सरकार द्वारा दिया आदेश लागू नहीं होता है।

धर्म और राजनीति की अन्योन्यक्रिया के परिणामस्वरूप कई बार देश को गंभीर मुश्किलों का भी सामना करना पड़ा है। इसकी वजह से राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बाधाएं आती हैं। धर्म आधारित पृथक् राज्यों की मांग देश में धर्म और राजनीति की अतंःक्रियात्मकता के दुःखद पक्ष का द्योतक है। अकाली दल द्वारा उठायी गयी पंजाबी सूबे की मांग सतही तौर पर भाषा आधारित नजर आती है, लेकिन यथार्थतः यह धर्म आधारित पृथक् राज्य की मांग है। इस प्रकार, धर्म और राजनीति के गठजोड़ का अच्छा और बुरा दोनों परिणाम भारत में राजनीति और समाज के संबंधों को उद्द्वेलितकरता रहता है।

आरतीय राजनीति मेंसाम्प्रदायिकता(Communalism in Indian Politics)

साम्प्रदायिकता को मानवता के लिए अभिशाप माना गया है। भारत जैसे विशाल लोकतांत्रिक व्यवस्था में जहां अनेक धर्मों को मानने वाले तथा अनेकानेक जातियों के लोगों का निवास है वहां साम्प्रदायिकता एक गंभीर राजनीतिक सामाजिक समस्या है। साम्प्रदायिकता की मनोवृत्ति राष्ट्रीय एकीकरण में अवरोधक की भूमिका निभाती है। डी.आर. गोपाल के मतानुसार, ''साम्प्रदायिक तनावों तथा उपद्रवों को एक विघटनकारी कारक के बजाय मौलिक एकीकरण के अभाव में सूचक के रूप में देखा जाना चाहिए।''

प्रभा दीक्षित ने अपनी चर्चित पुस्तक **'साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ'** में एक नये दृष्टिकोण की प्रस्तुति करते हुए भारतीय राजनीति में मौजूद साम्प्रदायिकता के आयामों का विश्लेषण ऐतिहासिक संदर्भ में किया है। विश्लेषिका का ऐसा मानना है कि सम्प्रदायवाद सोच–समझ कर निर्मित किया गया एक राजनीतिक सिद्धान्त है जिसका प्रचार–प्रसार पुराने जमाने में स्थापित विशिष्ट समुदाय का एक वर्ग राष्ट्रवादी और लोकतांत्रिक शक्तियों को कमजोर करने के लिए करता था। विविध धर्मों, संस्कृतियों, जातियों व भाषाओं वाले समाज में लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के संचालन के लिए,राजनीतिक क्षेत्रों में प्रभावशाली बनने के लिए तथा सत्ता–प्राप्ति हेतु राजनीतिक सौदेबाजी के लिए धर्म संस्कृति, भाषा और जातियों का राजनीतिकरण हर समुदाय के लिए अपरिहार्य हो गया है, लेकिन धर्म व सम्प्रदाय से जुड़े तत्त्वों की दृष्टि से यह अल्पसंख्यकों के लिए विशेष महत्त्व रखता है।

बहुसंख्यक तथा अल्पसंख्यक दोनों वर्गों में साम्प्रदायिकता का तत्त्व विधमान होता है, लेकिन दोनों की प्रवृत्ति में गुणात्मक भेद है। यदि साम्प्रदायिक आन्दोलनों का विश्लेषण किया जाय तो यह स्पष्ट होता है कि उद्देश्य और नेतृत्व दोनों दृष्टिकोणों से धर्म एवं संस्कृति आधारित साम्प्रदायिक आन्दोलन व्यवस्था में क्रान्ति या पुनर्निर्माण के बोधक नहीं होते हैं, अपितु वे सामाजिक–राजनीतिक प्रतिक्रिया के परिणाम होते हैं। भारतीय राजनीति के संदर्भ में साम्प्रदायिकता के तत्त्वों एवं कारकों या मनोवृत्तियों को हिन्दू मुसलमान दोनों सम्प्रदायों के राजनीतिक महत्त्वाकांक्षी अभिजनों द्वारा अपनी स्वार्थ–सिद्धि तथा निजी हितवर्द्धन के लिए बढ़ावा दिया जाता रहा है। हिन्दू, मुसलमान दोनों समुदायों में मौजूद सामाजिक ढाँचे का विश्लेषणपरक अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि सत्ता, सम्पत्ति तथा सामाजिक प्रतिष्ठा पर एकाधिकार करने वाले अभिजनवर्ग का सांस्कृतिक रुझान एवं जीवन शैली आमजनों से बिल्कुल भिन्न थी, यहां तक कि अपने समुदाय की जनसंस्कृति से भी इनकी सांस्कृतिक समरूपता नगण्य ही थी। दोनों समुदायों के अभिजन जनसंस्कृति से पृथक् अपनी उच्च संस्कृति का पोषण कर रहे थे। अभिजनों एवं सामान्यजनों के बीच संस्कृतियों का जो आदान–प्रदान हुआ उसका स्वरूप उपयोगितामूलक था। दोनों समुदायों के अभिजन वर्गों द्वारा संरक्षित तथा संकीर्णता के दायरे में संचालित सांस्कृतिक सम्प्रदायवाद की वजह से राष्ट्र में एक राष्ट्रीय संस्कृति का आविर्भाव संभव नहीं हो सका।

एक धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक व्यवस्था के रूप में भारत की स्थापना के बाद बहुसंख्यक हिन्दुओं में नये राष्ट्रवाद के साथ तादात्म्यता स्वाभाविक रूप से संस्थापित हो गयी, लेकिन मुस्लिम सम्प्रदाय के अधिकांश लोगों में भारतीय लोकतांत्रिक राष्ट्रवाद के प्रति निष्ठा स्थापित ही नहीं हो पायी। कुछ मुसलमानों द्वारा राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रियता दिखाई गयी, लेकिन अधिकांश लोगों के मन में राजनीतिक अलगाव की प्रवृत्ति घर बनाने लगी। भारतीय राष्ट्रवाद के प्रति इस समुदाय में राजनीतिक विश्वास के अभाव की वजह से वे लोकतंत्रीय राष्ट्रवाद को अपनी शक्ति और सामाजिक–राजनीतिक प्रतिष्ठा के मद्देनजर संदेह की दृष्टि से देखने लगे। लोकतंत्र में संख्या बल के हाथों में सत्ता–निर्माण का अधिकार सौंप कर मुसलमानों की स्थिति स्थायी रूप से अधीनस्थ की कर दी गयी। चुनावी राजनीति के प्रसंग में सम्प्रदायवाद राष्ट्रवाद की तुलना में अभिजन वर्ग के लिए काफी लाभकारी साबित हुआ। अल्पसंख्यक समुदायों में लोकतंत्र एवं राष्ट्रवाद के प्रति उत्पन्न शंकाओं का समाधान साम्प्रदायिक विचारधारा में ढूंढा जाने लगा। धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में राजनीतिक मान्यता स्थापित होने के बाद इनके राजनीतिक अभिजनों द्वारा अपनी राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए पृथक् इस्लामी राज्य की मांग उठायी गयी। मतप्रबंधन की दृष्टि से मुस्लिम मतों के बिखराव को रोकने के लिए सरकार द्वारा मुसलमानों को अल्पसंख्यक समुदाय के नाम कुछ विशेष सहूलियतें दी गयीं। अल्पसंख्यकों के नाम पर मिलने वाली सुविधाओं की वजह से बहुसंख्यक

हिन्दुओं में इनकी बढ़ती राजनीतिक हैसियत को देख दुश्चिन्ताएं बढ़ने लगीं जिसके प्रतिक्रियास्वरूप हिन्दू सम्प्रदायवाद का आविर्भाव हुआ।

भारतीय राजनीति में साम्प्रदायिकता के प्रमुख आयाम

(Main Dimensions of Communalism in Indian Politics)

भारतीय राजनीति में आजादी के बाद साम्प्रदायिक तत्त्वों की मजबूती के पीछे कई महत्त्वपूर्ण कारक प्रधानांग की भूमिका अदा करते हैं, जो निम्नांकित है :

1. **मुस्लिम सम्प्रदाय में मौजूद पृथक्करण की प्रवृत्ति**–मुस्लिम समाज की प्रवृत्ति में मौजूद पृथक्करण की भावना उन्हें राष्ट्रवाद की धारणा को अपनाने नहीं देती है, नतीजतन वे राजनीति की मुख्य धारा से अपने आपको जोड़ नहीं पाते हैं। भारतीय संविधान की ख़ास विशेषताएं; यथा– धर्मनिरपेक्षता, सामाजिक न्याय, आर्थिक न्याय व समाजवाद आदि वैचारिकी का इस समाज पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा है, क्योंकि मुस्लिम नेताओं द्वारा अपने समाज की जनता के बीच सरकारी इरादों के प्रति आशंका जतायी जाती है और मुस्लिम समाज के हितों की सुरक्षा के लिए उनकी पृथक्तावादी प्रवृत्ति को बढ़ाने का कार्य किया जाता है। इस प्रकार, मुस्लिम समाज में साम्प्रदायिकता के तत्त्वों को जिन्दा रखने में मुस्लिम संगठनों की भूमिका काफी महत्त्वपूर्ण रही है।
2. **शैक्षणिक एवं आर्थिक पिछड़ापन**–अंग्रेजी हुकूमत के समय भी अधिकांश मुसलमानों की आर्थिक स्थिति कमजोर थी इसलिए इस समाज में आमरूप से शिक्षा का प्रसार नहीं हो पाया। कुछ धनाढ्य मुस्लिम परिवारों को छोड़ आम मुसलमान शैक्षिणक दृष्टि से पिछड़े थे इसलिए भी उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत नहीं हो पायी। इससे उनके अन्दर असंतोष की भावना बढ़ी और साम्प्रदायिकता के तत्त्वों को मजबूती मिली जिसका प्रकटीकरण यदा–कदा हिंसा के रूप में होता रहा है।
3. **पाकिस्तानी संरक्षण एवं प्रचार**–भारत के मुसलमानों में साम्प्रदायिकता की भावना को जिन्दा रखने में पाकिस्तानी संगठनों की भूमिका काफी महत्त्वपूर्ण रही है। भारत में हिन्दू–मुसलमान के बीच तनाव की छोटी घटनाओं को भी पाकिस्तानी टेलीविजन, अखबारों एवं रेडियों में काफी बढ़ा–चढ़ा कर प्रचार किया जाता है। ऐसा करके पाकिस्तान अपने को भारतीय मुसलमानों का पैरोकार, हिमायती और हितरक्षक साबित करना चाहता है और भारत के धर्मनिरपेक्षतावादी स्वरूप को चोट पहुंचाना चाहता है।
4. **हिन्दू संगठनों की संकीर्ण मानसिकता**–भारत में हिन्दू समुदाय के कुछ कट्टर संगठन जैसे–हिन्दू महासभा, विश्व हिन्दू परिषद् आदि ऐसे संगठन हैं जो संकीर्ण धर्मान्धता के पोषक हैं जो समय–समय पर अपनी अभिव्यक्तियों तथा कार्यशैली के माध्यम से हिन्दू समाज की भावनाओं को उत्तेजित करने में महती भूमिका निभाते रहते हैं।सताधारी भाजपा के कुछ नेता भी आजकल सार्वजनिक मंच , रेडियो, टेलिभिजन व समाचारपत्रों के माध्यम से भड़काऊ बयान देने से गुरेज़ नहीं करतेहैं। इनकेसोच ये कहती है कि भारत हिन्दुओं का देश है इसलिए सिर्फ हिन्दू धर्मावलम्बियों को यहां रहने का अधिकार है। हिन्दू धर्माचार्यों की ये अभियुक्तियां मुस्लिम समुदाय में साम्प्रदायिकता के तत्त्वों को बढ़ावा देने में तथा साम्प्रदायिक भावना के मजबूतीकरण में अहम् भूमिका अदा करती हैं।
5. **सरकारी निर्णय एवं कार्यशैली**–देश में अब तक घटित हुए साम्प्रदायिक दंगों का इतिहास खंगालने से यह पता चलता है कि कई बार सरकारी निर्णय, सरकार की कार्यशैली तथा सामाजिक मुद्दों के प्रति सरकार का उदासीन रवैया भी साम्प्रदायिक दंगों के लिए आधारभूमि तैयार करने में आधारतत्त्व की भूमिका निभाता रहा है। चाहे राम जन्मभूमि एवं बाबरी मस्जिद का मामला हो या शाहबानो का मामला हो, इन विषयों पर सरकार की कार्यशैली के प्रतिक्रिया स्वरूप दोनों ही समुदायों में पनपी साम्प्रदायिकता की भावना को नया चेहरा-नयी मजबूती मिली है।

भारत में साम्प्रदायिक राजनीति के विकास पर गृह मंत्रालय की गोपनीय रिपोर्ट के सारतत्त्वों की चर्चा यहां प्रासंगिक है, जिसमें राजनीतिक दलों और दबाव समूहों को साम्प्रदायिक राजनीति के विकास का मुख्य अग्रेसर कहा गया है। इनको साम्प्रदायिक दंगों का वास्तविक कर्ता–धर्ता कहा गया है। साम्प्रदायिक दंगों की जाँच के लिए गठित आयोगों की रिपोर्टों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि ऐसे सभी मामलों में राजनीतिक दलों की संलग्नता निश्चित रूप से मौजूद होती है। विगत कुछ दशकों से साम्प्रदायिक हिंसा को बढ़ावा देने के पीछे विदेशी सत्ता का हाथ होने का आरोप भी जोर–शोर से उठाया जाता रहा है। विशेष रूप से इसके पीछे पाकिस्तान तथा अन्य मुस्लिम देशों में सक्रिय आतंकवादी संगठनों की भूमिका की बात की जाती है।

साम्प्रदायिक राजनीति के प्रसंग में यही कहा जा सकता है कि सामाजिक–राजनीतिक यथार्थ के अनुरूप सभी राजनीतिक दलों द्वारा मुस्लिम सम्प्रदाय को वोट बैंक समझा जाता है और इसी आलोक में साम्प्रदायिक राजनीति को सदैव जिन्दा रखा जाता है। इस प्रवृत्ति की वजह से दोनों सम्प्रदायों की धार्मिक भावनाएं आहत होती हैं। दोनों समुदायों के बीच भय, अविश्वास, संदेह की मजबूत भावना इनके बीच पलने वाली साम्प्रदायिक वैमनस्य का मुख्य आधार है। आपसी वैमनस्य की प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप साम्प्रदायिक दंगों की संख्या में काफी इज़ाफ़ा हुआ है। सरकारी दृष्टि में दंगों की मूल वजह अल्पसंख्यक समुदाय में 'कट्टरपंथी नेतृत्व का उभार' और 'पारम्परिक मुस्लिम गुटों के अरब देशों से भारी मात्रा में धन प्राप्त होना' तथा 'मुस्लिम सम्प्रदाय पर अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामी गुटों की एकता का प्रभाव' है।

गृह मंत्रालय का दस्तावेज ये कहता हैं कि 'अन्य किसी भी मुद्दे पर हिन्दू–मुस्लिम समुदाय का आपसी सद्भाव उतना नहीं बिगड़ा जितना कि राम जन्मभूमि–बाबरी मस्जिद विवाद की वजह से बिगड़ गया है। राम जन्मभूमि मुद्दे को भारतीय जनता पार्टी द्वारा अपना परम्परागत वोट बैंक बढ़ाने के लिए हिन्दू कार्ड के रूप में इस्तेमाल किया गया। नब्बे के दशक और उसके बाद हुए साम्प्रदायिक दंगों से जो नई बात उभर कर सामने आयी है वह यह है कि साम्प्रदायिक हादसों का केन्द्र पहले शहरी इलाके थे, लेकिन अब साम्प्रदायिकता ग्रामीण इलाकों में भी तेजी से फैल रही है। 1988 में हुए 611 साम्प्रदायिक इत्तफाकों में 55 प्रतिशत वारदातें ग्रामीण इलाकों में हुईं। 1971 में गंभीर दंगों की संख्या 80 थी जो 1982 में बढ़कर 427 हुई और 1988 इनकी संख्या बढ़कर 611 हो गयी। 1989–1990 के रिपोर्ट के आधार पर मध्यप्रदेश के 40 से ज्यादा कस्बे साम्प्रदायिक दंगों से ग्रसित थे जिसका स्वरूप बहुत भीषण था। गृह मंत्रालय के दस्तावेजों के अनुरूप 1997–98 में सामुदायिक हिंसा की 725 वारदातें हुई, 1988–1999 में 626 हिंसक वारदातें हुईं। गृह मंत्रालय द्वारा जारी रिपोर्ट के अनुसार 27 फरवरी, 2002 गोधरा, गुजरात में हुए सामूहिक हत्या काण्ड की वजह से 28 फरवरी तथा। मार्च 1, 2002 को भयानक रूप से साम्प्रदायिक हिंसा गुजरात के अनेक शहरों में फैल गयी। गोधरा काण्ड में 58 लोग जिन्दा जला दिये गये थे। सरकारी आंकड़ों के अनुसार गुजरात के इस साम्प्रदायिक हिंसा में 692 लोगों के मारे जाने की सूचना है।

सारांशतः, यह कहा जा सकता है कि भारतीय राजनीति में साम्प्रदायिकता मूलतः ब्रिटिश हुकूमत द्वारा अपनायी गयी 'फूट डालो और शासन करो' की नीति का परिणाम है। यह एक विघटनकारी प्रवृत्ति है। यह दोनों सम्प्रदायों में आपसी द्वेष पैदा कराता है जो यदा–कदा भीषण रूप धारण करके साम्प्रदायिक हादसों के रूप में सामने आता है। इससे देश को जहां एक ओर आर्थिक हानि होती है, वहीं यह राजनीतिक अस्थिरता की परिस्थितियां भी उत्पन्न कराता है। साम्प्रदायिकता राष्ट्रीय एकता व अखण्डता का दुश्मन है और राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से एक गंभीर राजनीतिक–सामाजिक समस्या है। भारतीय राजनीति को स्वस्थ रखने के लिए साम्प्रदायिकता की प्रवृत्ति का समूल उन्मूलन करना समय की मांग है।